पेरिस
मई ३०, २००८

संदेश संख्या – १४८
गुरू को एक शिष्य का संदेश

''शून्यता जब घटित होती है तब भी यह बोध रहता है कि कुछ घटित हुआ ।

किन्तु तब जो शून्यता होती है वह ज्ञातातीत, कालातीत, निःशब्द, निर्विचार और निराकाश की अवस्था होती है । यहाँ तक कि 'शून्यता' का भी अनुभव नहीं होता । यह केवल एक शब्द मात्र है जिसका उपयोग 'वर्णनातीत प्रक्रिया' के वर्णन के लिए किया गया है ।

गुरूजी, हाल ही में हुए एक विस्फोट के बाद उत्पन्न उत्तेजना को उपर्युक्त शब्दों में मैंने अभिव्यक्त किया था । मैंने उसे आपको भेजा नहीं था, किन्तु उसे कम्प्यूटर में संरक्षित कर लिया था । लेकिन आज जब कम्प्यूटर पर विभिन्न संदेशों को देख रहा था तभी संदेश ७५–''प्रबोध क्या है?'' पर मेरी अगुँलियाँ रुक गईं और गुरू के निम्नलिखित शब्दों ने सभी प्रश्नों का उत्तर दे दिया और हमेशा की तरह, उत्तेजना समाप्त हो गई ।

''यह चेतना जिससे हमलोग परिचित हैं और जिसे स्पष्ट रूप से महसूस करते हैं, ''भगवत्ता'' को किसी भी परिस्थिति में स्पर्श नहीं कर सकती क्योंकि यह ''मैं–पना'' में अत्यधिक संलिप्त और तल्लीन है । फिर भी, जब यह ''मैं–पना'' किसी तरह छूट जाता है तब कभी–कभी ''भगवत्ता'' की झलक मिल सकती है ।''

''भगवत्ता'' की झलक एक आघात के रूप में होती है जो विभेदकारी चित्तवृत्ति को छिन्न–भिन्न कर देती है। प्रबोध की अवस्था में भी दैनिक जीवन चलता रहता है लेकिन तब जीवन की घटनाओं का प्रज्ञा की स्थिति में अवलोकन मात्र होता है अर्थात् वहाँ अवलोकनकर्त्ता नहीं होता । अवलोकनकर्त्ता, अपने अतीत के पूर्वाग्रहों, दबावों, महत्वाकांक्षाओं और आपाधापी के कारण प्रज्ञा को रोक देता है । प्रबोध आध्यात्मिक बदमाशों और धार्मिक धूर्त्तों द्वारा चलाये जाने वाले ध्यान–केन्द्रों में घटित नहीं होता । प्रबोध की अवस्था में पूर्व–धारणा और पूर्व–निर्धारित निष्कर्षों से रहित प्रतिक्षण सहज रहकर जीवन जीया जाता है ।''

''प्रबोध शौचालय में प्रयोग होने वाले कागज की तरह है जो स्वयं को गन्दा कर आपकी सफाई करता है । इसे यथाशीघ्र फेंककर पानी में बहा देना चाहिए, अन्यथा, यह भी एक अनुभव बन जाएगा और बदबू करने लगेगा तथा चारों ओर प्रदूषण फैलाएगा ।''

गुरूजी, मैं बारम्बार आपके चरणों में प्रणाम करता हूँ । इस शरीर को जब भी मार्ग–दर्शन की आवश्यकता होती है, गुरु–ऊर्जा वह प्रदान करती है और गुरु–ऊर्जा के माध्यम से, सभी सुरक्षा–व्यवस्थाओं से परे एक परम सुरक्षा प्राप्त होती है । ऐसा हमेशा ही देखा है ।

इसी कारण यह शरीर जीवित सद्गुरू को असीम प्रेम के साथ आलिंगन करना चाहता है । यह प्रेम इस शरीर में गुरू–कृपा से ही प्रवाहित हो रहा है।''

।। जय गुरू, जय गुरू, जय गुरू ।।